अनन्त और अणु का ईश्वर कैसे हो सकता है। वस्तुस्थिति यह है कि अनन्त और अणु का नियन्त्रण करते हुए भी श्रीभगवान् इस समूची सृष्टि से असंग हैं। यही उनका योगैश्वर्य अर्थात् अचिन्त्य दिव्य शक्ति है। जहाँ मूढ़ यह कल्पना नहीं कर सकते कि नराकार श्रीकृष्ण अणु-अनन्त के परमेश्वर हैं, शुद्ध भक्तों को इसमें सन्देह नहीं होता, क्योंकि वे जानते हैं कि श्रीकृष्ण साक्षात् स्वयं भगवान् हैं—**कृष्णस्तु भगवान् स्वयं**। अतएव भगवच्चरणारविन्द में सर्वात्मसमर्पण करके वे कृष्णभावनामृत (भगवद्भक्ति) के परायण हो जाते हैं।

श्रीकृष्ण के नरावतार के सम्बन्ध में निर्विशेषवादियों तथा सविशेषवादियों में बहुत मतभेद है। परन्तु यदि हम कृष्णविज्ञान के प्रामाणिक शास्त्रों—भगवद्गीता एवं श्रीमद्भागवत का आश्रय लें, तो स्पष्ट हो जायेगा कि श्रीकृष्ण स्वयं भगवान् हैं। इस धराधाम पर नररूप में अवतरित होने पर भी वे सामान्य मनुष्य नहीं हैं। श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध, प्रथम अध्याय में श्रीकृष्ण की लीलाओं के सम्बन्ध में ऋषियों की जिज्ञासा के उत्तर में कहा गया है कि उनका नरावतार मूढ़ों के लिए विडम्बनाकारी है। पृथ्वी पर अपने अवतरण काल में श्रीकृष्ण ने जो-जो अद्भुत कार्य किये, कोई भी साधारण मनुष्य उनका आचरण नहीं कर सकता। जननी-जनक वसुदेव-देवकी के आगे श्रीकृष्ण पहले चतुर्भुज रूप से ही प्रकट हुए थे। परन्तु माता-पिता की वात्सल्य प्रेममयी स्तुति से प्रेरित होकर वे बालरूप हो गए। सामान्य मनुष्य के रूप में प्रकट होना उनके चिन्मय श्रीविग्रह का एक मधुर विलास है। गीता के ग्यारहवें अध्याय में भी **तेनैव रूपेण** आदि उल्लेख हैं। अर्जुन ने चतुर्भुज रूप को फिर देखने के लिए श्रीभगवान् से प्रार्थना की। इस पर उस रूप का दर्शन देकर भगवान् श्रीकृष्ण ने अपना मूल द्विभुज रूप पुनः धारण कर लिया। श्रीभगवान् के ये विविध रूप निःसन्देह साधारण मनुष्यों से विलक्षण हैं।

कुछ मूढ़, जो मायावाद से कलुषित होने के कारण श्रीकृष्ण का उपहास करते हैं, श्रीकृष्ण को सामान्य मनुष्य सिद्ध करने के लिए श्रीमद्भागवत से इस श्लोक का प्रमाण देते हैं : **अहं सर्वेषु भूतेषु भूतात्मावस्थितः सदा**—'परमेश्वर जीवमात्र में विद्यमान है।' (श्रीमद्भागवत ३.२९.२१) : श्रीकृष्ण का उपहास करने वाले अप्रामाणिक व्यक्तियों की मनोकल्पित व्याख्याओं का अनुसरण करने की अपेक्षा इस श्लोक का तात्पर्य श्रील जीव गोस्वामी आदि वैष्णव आचार्यों के अनुसार समझना चाहिए। इस श्लोक पर टिप्पणी करते हुए श्रील जीव गोस्वामिचरण कहते हैं कि श्रीकृष्ण परमात्मारूप से चराचर जीवमात्र में हैं। इसलिए जो प्राकृत भक्त केवल मन्दिर में प्रतिष्ठित श्रीभगवान् की अर्चामूर्ति की परिचर्या में संलग्न रहता है, अन्य जीवों को सम्मान नहीं देता, उसकी अर्चा-पूजा व्यर्थ है। भगवद्भक्तों की तीन श्रेणियों में प्राकृत भक्त सबसे कनिष्ठ श्रेणी में आता है। वह अन्य भक्तों की उपेक्षा कर अर्चा-विग्रह के प्रति ही एकाग्र रहता है। श्रील जीव गोस्वामिपाद की चेतावनी है कि इस मनोदशा को शुद्ध करना आवश्यक है। भक्त को जीवमात्र के हृदय में श्रीकृष्ण के